Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

आदर्श जीवन की कथाएं

...वन कथाएं

10.1 ...म भाग

...ी त्रिमला मेहता

... कालौनी नई दिल्ली

(८२)

स्वर्गीय श्रीमती सुलखनी देवी महाजन

प्रकाशक

सुलखनी देवी महाजन धर्मार्थ ट्रस्ट

एम-१० लाजपतनगर नं० ३, नई दिल्ली-२४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरु देवाय नमः

कहानियां सबको प्रिय लगती हैं क्योंकि उनमें अपना और आस-पास का जीवन प्रतिध्वनित होता है। मुझे कहानियों से प्रेम है।

मैं चाहती थी कि कहानियों के द्वारा बच्चों को कुछ ऐसी बातें बता सकूं जो उनके जीवन को सुन्दर बनाने में, उनमें अच्छी आदतें डालने में सहायक बन सकें। मैंने यह सुना था कि हमारे शास्त्र-पुराण ऐसी कहानियों से भरे पड़े हैं जिनमें जीवनोपयोगी बातों के साथ-साथ आत्म-ज्ञान सम्बन्धी तत्व भी समझा जा सकता है। कुछेक ग्रन्थों को मैंने पढ़ा तो पाया कि उनमें से मैं भी अपने जीवन के लिए बहुत कुछ प्राप्त कर सकती हूं। आयु में बड़े हुए तो क्या, सांसारिक शिक्षा प्राप्त कर ली तो क्या हुआ, धर्म के मूल सिद्धान्त तथा जीवन को ऊँचा उठाने वाली कई बातों को हम अब तक नहीं सीख पाए। सो अपने लिए और अपने बच्चों के लिए कुछ उपयोगी कहानियों को मैंने फिर से लिखा, जिससे वे कहानियां आज के बालक के लिए तर्क का विषय न बन जांय। असंख्य कहानियों में से कुछेक को चुनना बड़ी कठिन बात है क्योंकि सभी कहानियाँ अच्छी हैं और जीवन के लिए कुछ-न-कुछ शिक्षा देती हैं।

कुछेक कहानियां मैंने स्वयं भी अपनी कल्पना से लिखी हैं। मेरी इच्छा यही रही है कि आजकल के उछृंखल वातावरण में पले बच्चों में संयमपूर्ण जीवन जीने का भाव उठना चाहिए। बालकों को अपने गुणों-अवगुणों का बोध हो, बुराईयों को स्वीकार करने का साहस तथा दूर करने की इच्छा हो। तब उनसे मुक्त होने का ढंग भी सिखाया जा सकता है। हर मां को ऐसी ही कहानियां बच्चों को सुनाकर उनमें निर्भीकता, साहस, बलिदान और सच्चाई का भाव भरना चाहिए। बालकों को तो कहानियां चाहिएं। मनो-रंजक के साथ कुछ थोड़ा उपदेश भी हो तो समय का सदुपयोग हो सकता है।

मुझे आशा है कि मेरा यह उद्देश्य अवश्य पूरा होगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

विमला मेहता

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिथी...... पृष्ठ......

अहिंसा के अवतार 'बुद्ध'

महात्मा बुद्ध अहिंसा के अवतार थे। वे अहिंसा को विश्व-शांति का एकमात्र उपाय मानते थे। कोई किसी को 'मन से, वचन से, कर्म से दु:ख न दें'। कितना अच्छा सिद्धान्त है। किसी के लिये बुरे विचार मन में न लाओ। किसी को बुरा भला न कहो। किसी को दु:ख न दो। ऐसे सुवर्णमय सिद्धांतों का पालन करते हुए उन्होंने जीवन-भर लोगों को सुन्दर मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया।

महात्मा बुद्ध एक राजकुमार थे। उनका बचपन का नाम सिद्धार्थ था। उनका चचेरा भाई देवदत्त उनसे ईर्षा करता था। सिद्धार्थ अपने निर्मल स्वभाव के कारण सबके प्रिय बन गये। देवदत्त की क्रूरता के कारण सब उससे घृणा करने लगे।

एक बार देवदत्त ने उपवन में उड़ते हंस को अपने तीर से बेध दिया। सिद्धार्थ को उस पर दया आ गई। उन्होंने हंस को उठाया। तीर निकालकर उसका घाव धोकर पट्टी बांध दी। देवदत्त को क्रोध आ गया। उसने अपना शिकार मांगा। सिद्धार्थ हंस को महलों में ले गये। देवदत्त ने राज दरबार में अपील की। सिद्धार्थ ने वहां भी तर्क द्वारा सिद्ध कर दिया कि मारने वाले से जीवन देने वाले का अधिकार अधिक होताहै। देवदत्त ने भावी सम्राट को कायर व अकमण्य कह कर द्वन्द्व युद्ध के लिये ललकारा। सिद्धार्थ वीर थे। मल्ल युद्ध, शस्त्र कला व अन्य कई खेलों में उन्होंने देवदत्त को हरा दिया। अब तो प्रजा अपने भावी सम्राट की वाह-वाह कर उठी। उनका सम्राट बलवान, धर्मवान और कार्य-कुशल होते हुये भी प्रजा पालक व दीन-दु:खी की सहायता करने वाला होगा। यह कैसी आनन्द की बात थी। देवदत्त वहां तो चुप रहा परन्तु उसके मन में यह बात बैठ गई कि किसी भी तरह सिद्धार्थ को नीचा अवश्य दिखाऊंगा।

इस बात का अवसर ही कहां मिला। सिद्धार्थ राजपाट त्याग विश्व-कल्याण की भावना से तपस्या करने वन में चले गये। वहां

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने आत्म-साक्षात्कार किया। वे बुद्ध हुए! शाश्वत ज्ञान को पाकर वे उसका प्रचार करने निकले। जनता उनके पीछे उमड़ चली। राजा बनकर जो यश उन्हें न मिलता उसे वे साधु बनकर पा गए। अब तो देवदत्त की ईर्ष्या और बढ़ी। वह किसी भी तरह बुद्ध को नीचा दिखाना चाहता था। उसने सोचा मैं भी संन्यास लेकर तपस्या करूंगा। बुद्ध से भी बड़ी तपस्या और उससे भी अधिक यश अर्जित करूंगा। और आश्चर्य की बात उन्होंने बुद्ध को ही गुरु बनाया।

कई वर्ष तक तपस्या में लीन रहने पर भी देवदत्त का मन शांत न हुआ। बुद्ध को उसकी कठिन तपस्या देखकर दया आ गई। वे स्वयं उसके पास पहुंचे। "मन को शान्त करो, वत्स!" बड़े प्रेम से बुद्ध बोले। "घृणा से नहीं, प्रेम से मानव विजयी बनता है। मानापमान की चिन्ता संन्यासी नहीं करते। मन शान्त हो तो इतनी कठिन तपस्या की आवश्यकता नहीं होती। यश की चिन्ता मनुष्य को पथ से विचलित कर देती है।"

देवदत्त समझ गया। गुरु के चरणों में शीश झुकाकर उसने मन को एकाग्र किया और शीघ्र ही सिद्ध बन गया।

कुछ काल तक तो वह शान्ति से धर्म-प्रचार करता रहा। उसके शिष्यों की संख्या बढ़ने लगी। उसमें अहं जागा। पुरानी शत्रुता का विचार आया। वह जनता में बुद्ध-विरोधी प्रचार करने लगा। लोग महात्मा बुद्ध में अधिक विश्वास रखते थे। देवदत्त ने कई उपायों से उन्हें मरवा डालना चाहा। एक बार जब वे एक पहाड़ी प्रदेश में ध्यान-मग्न बैठे थे तो देवदत्त ने एक भारी पत्थर लुढ़का दिया। पत्थर बुद्ध के पांव के पास आ गिरा। उनके पांव में थोड़ी चोट आई। लोग देवदत्त को पकड़ कर उनके पास ले आए। महात्मा बुद्ध ने एक सौम्य मुस्कान से उन्हें विदा कर दिया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथि.........
पु०सं०.........
भारती
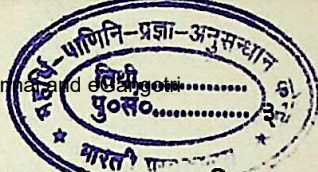
देवदत्त का क्रोध अब भी शान्त न हुआ। उसने महाराज बिम्ब-सार के पुत्र अजातशत्रु को अपने साथ मिला लिया। उसे बुरी सलाह देकर अपने पिता के विरुद्ध कर दिया। पुत्र ने पिता को अनेकों कष्ट देकर जेल में मार डाला और देवदत्त बुद्ध के प्राणों का ग्राहक बना रहा।

जब क्रोध व घृणा अपना उग्र रूप धारण कर लेती हैं तो मनुष्य का रक्त सूख जाता है। अनेकों रोग उसे तंग करने लगते हैं। जितना क्रोध आता है उतना मनुष्य रुग्ण होता है। जितना रोग बढ़ता है उतना मनुष्य चिड़चिड़ा हो जाता है। सो इने-गिने शिष्यों को छोड़ सभी बुद्ध की शरण चले गए।

देवदत्त का शरीर अत्यधिक निर्बल हो गया। उसे अतिसार हो गया। जुलाब बन्द ही न होते थे। अपना अन्त निकट जान उसे अपने कुकर्मों पर पश्चात्ताप होने लगा। अपने शिष्यों से उसने अनुनय विनय की कि मुझे बुद्ध के पास ले चलो। मैं उनके चरणों में प्राण देना चाहता हूं। वे महान् हैं। मुझे अवश्य क्षमा कर देंगे।

कुछ कोस चलने पर देवदत्त के लिए एक कदम भी चलना मुश्किल हो गया। आंखों के आगेअन्धेरा छा गया। उसने मन ही मन बुद्ध का स्मरण किया और वहीं मूर्छित होकर पड़ा रहा।

बुद्ध ने शिष्यों द्वारा सब वृत्तान्त जान उसी समय प्रस्थान कर दिया। देवदत्त का सिर गोद में रखकर उन्होंने उसे आश्वासन दिया। उनके प्रेम का स्पर्श पाकर देवदत्त का कलुषित मन पवित्र हो गया। उन्हीं की गोद में उसने अन्तिम श्वांस लिया।

महात्मा का अर्थ माहनात्मा है,ऐसा महापुरुष जो अपने से छोटों का अपराध क्षमा कर दे। एक ऐसी ज्योति जिसके निकट साधारण व्यक्ति अपने अवगुणों को देखकर उन्हें दूर कर सके। महात्मा एक ऐसी लौ है जिसमें असंख्य दीपक जलाने की सामर्थ्य है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्त्तव्य-पालन धर्म है

चन्द्रमोहन का पिता राजाराम मिल मजदूर था। उसका मासिक वेतन कुल मिलाकर सवा सौ रुपये से भी कम। जिस पर बूढ़े माता-पिता की सेवा। पत्नि, पुत्री व पुत्र का भरण-पोषण। सदा चिन्ता में ही समय कट जाता था। फिर भी यह सोचकर कि चन्द्र योग्य व्यक्ति बन जाय उसने उसे स्कूल में भरती करा दिया।

उसी स्कूल में मिल मालिक सेठ अमृत लाल का पुत्र नन्द भी चन्द्र की ही कक्षा में पढ़ता था। चन्द्र पढ़ने में योग्य होने के कारण अध्यापकों को प्रिय था। नन्द को पिता के धन का मान था। चन्द्र प्रसन्न बदन, कार्यकुशल व परिश्रमी स्काउट था। नन्द आलसी, ईर्षालू और झगड़ालू था। चन्द्र कक्षा में प्रथम आता था तो नन्द कुछ रियायती नम्बर देकर पास कर दिया जाता था। उसके पिता स्कूल को इतना चन्दा जो देते थे। परिणाम यह हुआ कि चन्द्र स्कूल का प्रिय छात्र बन गया। नन्द से लोग डरते थे।

नन्द ने धन के बल पर मित्रों की संख्या बढ़ा ली। शाम को रोज खोमचे वाले के पास दस बारह मित्रों की दावत होती थी। चन्द्र अपनी हैसीयत जानता था। वह उनकी मण्डली में मिलना नहीं चाहता था। आज दावत खाई तो कल खिलानी भी तो चाहिए।

एक दिन चन्द्र किताबें उठाकर चुपचाप चला जा रहा था कि नन्द ने आवाज लगाई। 'आओ, तुम भी खाओ चन्द्र, भागे कहां जा रहे हो।" "धन्यवाद नन्द। मुझे आज बहुत काम है। मुझे जल्दी जाना है।"

नन्द खिलखिला पड़ा और उसके चाटूकार मित्र भी। चन्द्र चुप चाप घर चला गया। नन्द की हिम्मत बढ़ने लगी। बात-बात पर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तिथी........ पुस्तक........ भारती पुस्तकालय

चन्द्र का मजाक उड़ाने लगा। उसी के पिता की मिल में चन्द्र का पिता काम करता था। यही बात चन्द्र को नीचा दिखाने को पर्याप्त थी। चन्द्र जितना दबता, नन्द उस पर उतना ही रोब डालता था। परिणाम यह हुआ कि सदा प्रसन्न रहने वाला चन्द्र उदास हो गया।

एक दिन तो नन्द ने ब्लेड से चन्द्र की निक्कर काट दी। उसे सीने चन्द्र को माली के घर जाना पड़ा। बड़ा दुःखी होकर चन्द्र चला जा रहा था कि नन्द ने फिर मजाक किया। "अरे इसकी मां ने निक्कर भी सी दी क्या?' अब तो चन्द्र आपे से बाहर हो गया। वह नन्द के पीछे मारने भागा। चन्द्र हृष्ट-पुष्ट था। नन्द कमजोर था। डरकर वह भी पीछे देखता हुआ भागा। आगे नन्द पीछे चन्द्र चौराहा आ गया। बड़ी तेजी से दोनों ओर से दो मोटरें आ रही थीं। चन्द्र ने नन्द को रुक जाने को कहा। नन्द और तेजी से भागा। चन्द्र का स्काउट मन जाग उठा। उसका कलेजा धक से रह गया। झट से स्काउट की विसल बजाकर उसने कारों को रुकने का संकेत किया और हाथ से रुकने का सिग्नल देकर दोनों कारों के बीच भाग कर खड़ा हो गया। कार वालों ने भी परिस्थिति को भांप लिया था। बड़ी कठिनाई से उन्होंने ब्रेक लगाई। इधर-उधर हिलती कारें चूं-चूं करती चन्द्र के दोनों ओर खड़ी हो गईं। नन्द का बैग गिर गया। उसके पांव में थोड़ी-सी चोट आई थी। चन्द्र को भी हल्का-सा झटका लगा। परन्तु दोनों बच गए। कार वालों ने दोनों को हस्पताल पहुंचा दिया और उनके पिता को सूचना भेज दी।

राजा राम और सेठ अमृत लाल एक ही समय अपने पुत्रों को देखने अस्पताल पहुंचे। दोनों का दिल धड़क रहा था। दुर्घटना का नाम ही बुरा होता है। अपने बच्चों को सःकुशल देखकर उनकी जान में जान आई।

नन्द अपनी भूल पर पछता रहा था। उसने चन्द्र से क्षमा मांगी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अपने पिता को स्वयं ही अपनी करतूतों का चिट्ठा सुना दिया। पिता ने उसे फिर ऐसा न करने का आदेश दिया और चन्द्र को बहुत प्यार किया।

दूसरे ही दिन राजाराम का पद बढ़ा दिया गया और अमृतलाल ने चन्द्र की पढ़ाई का सारा खर्च अपने सिर पर ले लिया। चन्द्र ने भी नन्द की पढ़ने में सहायता की तथा दोनों सगे भाईयों की भांति आनन्द से रहने लगे।

अच्छे लोग वही हैं जो दूसरों को विपत्ति में देख अपने मानापमान का ध्यान छोड़ उसकी सहायता करते हैं। हमें भी चन्द्र की भांति दूसरों के लिए सहायता का हाथ बढ़ाये रखना चाहिए।

दमन, दान तथा दया

प्रोफैसर विद्या भूषण आज रिटायर हो रहे थे। कालेज का स्टाफ, चपरासी तथा विद्यार्थी ही नहीं कालेज के पुराने विद्यार्थी भी उन्हें विदाई देने आये हुए थे। विद्याभूषण सबके प्रिय थे। उनकी कार्य कुशलता की धाक थी। हृष्ट-पुष्ट शरीर, मिष्ट-भाषण, सुखी जीवन और अपने कार्य में दक्षता, सब एक ही व्यक्ति को कम मिलती हैं। उनसे विनय की गई कि वे अपनी "सफलता का रहस्य" इस विषय पर ही भाषण दें।

प्रो० विद्या भूषण ने कहना शुरु किया, "मित्रो, कुछ वष पूव मैंने पुराणों में एक कहानी पढ़ी थी। उसमें बताया था कि देवता, मनुष्य और राक्षस ब्रह्मा जी के पास कुछ सीखने के लिए गये। उन्होंने उन्हें एक ही शब्द का मन्त्र दिया। वह शब्द है 'द'। देवताओं ने उसका अर्थ समझा दमन, मनुष्य ने समझा दान तथा राक्षसों ने समझा दया। मेरे तीन प्राचीन शिष्य जो आज अच्छे नागरिक हैं यहां पधारे हैं उनसे मैं अनुरोध करता हूं कि वे स्वयं ही

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दमन, दान और दया का अर्थ आपको समझायें। इन लोगों ने इन तीनों शब्दों को जीवन में उतारा है।"

दमन : सर्वप्रथम सेठ प्रवीण चन्द्र खड़े हुए। उन्होंने कहा, "मित्रो, हम प्रोफेसर साहब से अधिक तो कुछ न सीख सके, जो कुछ भी सीखा उसका पर्याप्त लाभ हुआ है। हमारे वंश में लक्ष्मी की सदैव कृपा रही है। पीढ़ियों से प्राप्त धन के कारण हमारे घरों में विलासता, आलस्य, उन्माद और प्रजा-पीड़न बढ़ता ही जा रहा था। हमारे घर की स्त्रियां सदा दु:खी रहती थीं। नौकर-चाकर काम व भय से दबे हुए मरे से जान पड़ते थे। रात-रात भर मैंने बचपन में मां को रोते देखा था। इतना धन, दास-दासियां उसे सुख न दे पाती थीं। तब मैं अनजान था। धीरे-धीरे हमारी सम्पत्ति का क्षय होने लगा। जुआ, शराब व बुरी स्त्रियों में धन पानी की तरह बह रहा था। कुछ बड़ा होने पर मुझे होश आया। गुरुदेव के वचनों ने जादू का असर किया। मैंने दमन नीति अपनाई। मैंने दमन का यही अर्थ लगाया कि अपने मन को वश में करो। छोटी-छोटी बातों में उसे भटकने न दो। सच्चा सुख सन्तुष्ट रहने में है। मन को काबू करना ही सच्ची वीरता है। मन वश में नहीं होता तो छोटी-सी वस्तु के न मिलने पर तड़पता है। उसे शान्त करो। ऐश्वर्य व विलासता शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों का क्षय करके आत्मा को कुंठित करती हैं। मैंने गुरुदेव की आज्ञा से मन को वश में कर लिया। मेरी देखा-देखी हमारे घर के सभी पुरुष राह पर आ गए हैं। हमारे घर में एक छोटा-सा मन्दिर बन गया है। वहीं प्रातः सायं सभी परिवार वाले नौकरों के साथ बैठकर प्रार्थना करते हैं। सप्ताह में एक बार प्रीति भोज होता है। पास-पड़ोस के लोग भी सम्मिलित होते हैं। अब हमारे घर बेईमानी का धन भी नहीं आता। पहले की भाँति हीरे जवाहरात तो घर में नहीं हैं। तो भी पर्याप्त धन है और उससे अधिक कीमती वस्तु हमारे घर आनन्द है। सभी प्रसन्न हैं, सुखी हैं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और स्वतन्त्र हैं। दमन की महिमा को मैंने इतना ही जाना है।" हाथ जोड़कर प्रवीण सेठ बैठ गए।

दान : अब प्रभाकर जी स्टेज पर खड़े हुए। "मित्रो, मैं कोई धर्मात्मा, प्रोफेसर अथवा वक्ता नहीं हूं। न ही प्रवीण सेठ-सा धनवान हूं कि अधिक दान पुण्य कर सकूं। तो भी प्रोफेसर साहब के दान शब्द का जो अर्थ मैंने समझा है आपको बता देता हूं। मैं एक फर्म में मैनेजर हूं। मेरे पास अधिक धन तो था नहीं जो निर्धनों में बांट देता परन्तु निर्धनों की सहायता करने का विचार करके मैंने एक योजना बनाई। अपने मुहल्ले वालों को एकत्र करके मैंने उस योजना को कार्य-रूप में परिणत किया। हमारे पड़ोस में एक विधवा निर्धन ब्राह्मणी रहती थी। उसका घर बड़ा परन्तु पुराना हो चला था। हम सबने मिलकर उसके घर की मरम्मत करा दी। इधर-उधर घूमते भिखारी बच्चों को एकत्र करके उस ब्राह्मणी के सुपुर्द किया। कई बच्चे जेब काटने तथा चोरी करने की कला सीख रहे थे। हम सबने अपनी आय के अनुपात से प्रति मास चन्दा जुटाना आरम्भ किया। पढ़े-लिखे लोग रात को स्कूल में पढ़ाने के लिए मान गए,हमारे घरों की स्त्रियों ने निर्धन बालकों को खाना पकाना,सिलाई, बुनाई व अन्य दस्तकारी के काम सिखानेका काम अपने जिम्मे लिया। एक पड़ोसी दूसरे शहर बदल कर जा रहे थे। उन्होंने अपना मकान ही हमारी पाठशाला को दे दिया। आप चलकर देखिए वहां अच्छा-खासा दस्तकारी स्कूल बन गया है। वहां के बनाये ब्रुश, जूते,दरियां, कालीन बेचने का प्रबन्ध हम कर देते हैं। अब हमारे पास इतने विद्यार्थी आते हैं कि उन्हें रखने का स्थान नहीं। कई लोग काम सीख कर अन्य स्थानों में नौकरियां पा रहे हैं। हम चाहते हैं ऐसे स्कूल हर मुहल्ले में खोल दिये जायें। गुरुदेव के आशीर्वाद से थोड़े प्रयास से हम एक सुन्दर केन्द्र चला रहे हैं।"

दया : अब रामलाल पहलवान खड़े हुए। हृष्ट-पुष्ट शरीर, खड़े

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान तिथि पु०सं० भारती पुस्तकालय
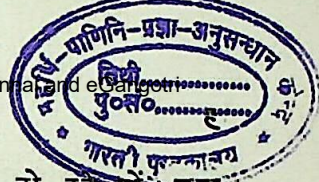
होने का ढंग ऐसा मानो कुश्ती के लिए तय्यार हो रहे हों। जसा मुस्करा कर बोले, "पहलवानी हमारा पुश्तैनी पेशा है। मेरे बाप, दादा बड़े लठैत हैं। मैं तो यों ही पढ़ने चला आता था। वैसे दण्ड पेलना, अखाड़े लड़ना मुझे हमेशा अच्छा लगता था। रामसिंह डाकू का नाम आपने सुना होगा। वे मेरे दादा हैं। एक बार एक झगड़े में उनकी लाठी से एक आदमी मर गया। उन्हें फांसी की सजा हुई। परन्तु वे जेल से भाग निकले और भयानक डाकू बन गये। वे हमारे घर नहीं आते थे परन्तु उनका धन हमारे घर कई उपायों से पहुंच जाता था। कई बार निरीह प्रजा का खून बहाकर उन्हें दुःख होता था। परन्तु एक बार इस राह पर चले तो लौटना असम्भव हो गया।

"मैं उनसे कई बार मिला था। उनकी कार्य-कुशलता का मुझ पर अच्छा प्रभाव पड़ा। शायद मैं भी वैसा बन जाता परन्तु गुरुदेव ने कहा 'वेटा, दया करो।' बस, मैंने वही मन्त्र जाना तबसे पढ़ने में भी कुछ मन लगा।"

"एक बार मेरे कालेज की एक छात्रा नलिनी का विवाह था। वह मुझे भैय्या कह कर बुलाती थी। मुझे भी वह अपनी बहन भोली की तरह ही लगती थी। वैसे वे दोनों भी पक्की सहेलियां थीं। विवाह से दो-चार दिन पूर्व कन्या के पिता को पत्र मिला कि इतने हजार के वस्त्र व गहने हमें मिल जायें नहीं तो कन्या समेत उड़ा लेंगे। नलिनी ने रोकर भोली से कहा—'भैय्या से कहो तो लाज रह जाये।' मैंने बात गांठ बांध ली। नलिनी के पिता से मिलकर पत्र पढ़ा तो दंग रह गया। पत्र के नीचे 'रामसिंह' के हस्ताक्षर थे। मैंने कन्या के पिता को आश्वासन दिया आप शान्त रहिए मैं सब सम्भाल लूंगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

"विवाह के दिन तक कुछ उत्पात न हुआ। हम कुछ लठैत वधु-

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्ष वालों की ओर से भेष बदलकर तैयार खड़े थे। नियत समय पर बारात आई। बाराती भी फूलों से लदे थे। मुझे शंका हुई। वर की ओर ध्यान से देखा वह एक डाकू था। उसके पिता के रूप में मेरे दादा। मेरा माथा ठनका। मेरे दादा भी मुझे पहचान गये। मुझे उन्होंने अलग लेजाकर समझाना चाहा। मैंने उन्हें समझाया। दोनों ओर से बात बढ़ चली। लोग एकत्र होने लगे। मुझे गुस्सा आ गया। एक लाठी का भरपूर हाथ मारकर मैंने वर को घोड़े से गिरा दिया। दूसरी लाठी मेरे दादा के सिर पर लगी। पुलिस भी आ गई। शेष डाकू भाग गए। असली बारात को वे लोग धर्मशाला में बन्द कर आये थे। उन्हें बुलाकर कन्या का विवाह धूमधाम से हो गया।"

"मेरे दादा और दूसरे डाकूओं को जेल की सजा मिली। मेरे सद्व्यवहार के कारण उन्हें फांसी नहीं दी गई। जेल में मैं उन्हें मिलने जाता तो दादा सदा आशीर्वाद देते, 'बेटा तू सपूत है। तूने मुझे पशु जीवन से उभार लिया।"

"साढ़े सात साल की कैद काट दादा पहलवान तो क्या रहते एक अच्छे खासे साधू बन गये हैं। दीन दु:खी जन की सेवा और अनाथों पर दया ही उनका जीवन है। मैं सोचता हूं मुझसे अधिक 'दया' का मन्त्र तो मेरे दादा ने पढ़ लिया है।"

अन्त में प्रोफेसर विद्या भूषण फिर खड़े हुए। उन्होंने कहा, "मेरे विद्यार्थियों ने दमन, दान और दया तीनों का अलग-अलग चित्रण किया है। परन्तु मेरे विचार में प्रत्येक व्यक्ति में तीनों गुणों का समावेश होना आवश्यक है। खूब धन कमाओ परन्तु उसका उपयोग ऐश्वर्य में न करो। बांट कर खाओ। खूब हृष्ट-पुष्ट बनो। अपने बल का प्रयोग असहायों की रक्षा में करो। मन को वश में रख कर सुखी जीवन व्यतीत करो।

गो धन गज धन, बाजि धन और रतन धन खान।
जब आवै सन्तोष धन, सब धन धूरि समान॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्य की शक्ति

स्वामी दयानन्द सरस्वती बाल ब्रह्मचारी थे। सदा ब्रह्म चिंतन में लीन रहा करते थे। बुद्धि, मन और इन्द्रियों पर उनका पूर्ण अधिकार था। सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय में बुद्धि को, ब्रह्म के ध्यान में मन को तथा लोक कल्याण के कार्यों में शरीर को लीन रखते थे। उन्होंने हिन्दू समाज की कुरीतियों और अनावश्यक रूढ़ियों को दूर हटाने का भरसक प्रयत्न किया। उन्हीं के प्रयास से हिन्दू समाज ने धर्म को एक नये परिष्कृत रूप में देखा। विधवा विवाह, स्त्री शिक्षा, अछूत-उद्धार जैसे कार्यों को हिन्दू समाज का अंग बनाने वाले वे ही पहले व्यक्ति थे।

उनका शरीर हृष्ट-पुष्ट था। उत्तम-शुद्ध सन्तुलित भोजन, नियमित रूप से व्यायाम तथा संयत जीवन के कारण देह कुन्दन की तरह चमकती थी। मुख पर अपूर्व तेज था। सादे वस्त्रों में भी वे एक महिमामय व्यक्ति प्रतीत होते थे। राह चलते लोगों का ध्यान स्वतः उनकी ओर आकर्षित हो जाता था। स्त्री-जाति उनकी दृष्टि में बहन अथवा मां थी। नारी को ममतामयी तथा चरित्र आदि सद्गुणों की खान मानते थे।

एक बार एक युवा सुन्दरी जिसका चरित्र कुछ अच्छा नहीं था अपने एक प्रेमी युवक के साथ घोड़ा-गाड़ी में कहीं भ्रमण के लिए जा रही थी। अपने सौन्दर्य का उसे इतना गर्व था कि वह यही चाहती थी कि सब लोग उसकी ओर देखें तथा उसके रूप की प्रशंसा करें। जब उसकी गाड़ी स्वामी जी के पास से जा रही थी तो उसने अनुभव किया कि आते-जाते लोग उन्हें शिर नवाकर प्रणाम कर रहे हैं। उसकी ओर कोई देखता ही नहीं। अपनी यह अवहेलना सहन न कर सकी। अहं को चोट खाकर नागिन सी फुफकार उठी—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बेकार के साधु बने फिरते हैं। दूसरों के अन्न पर पल कर मुटिया रहे हैं। ऐसे शरीर का भी क्या उपयोग ?"

स्वामी जी ने उसके शब्दों को सुना तो सोचने लगे। विश्व-नियन्ता ने कितना सुन्दर शरीर दिया है। इस बहन ने अपना मन कलुषित बना लिया है। इसे कुछ शिक्षा देनी होगी। दो कदम बढ़-कर उन्होंने उसकी गाड़ी का पहिया थाम लिया। दो घोड़ों की भागती हुई गाड़ी एक इंच भी आगे न बढ़ सकी।

युवती का क्रोध अपनी सीमा पार कर गया। "गाड़ी हांको, गाड़ीवान। घसीट डालो इस साधुड़े को।" चाबुक पर चाबुक मार रहा था गाड़ीवान, घोड़े हांप रहे थे और गाड़ी थी कि टस से मस न हुई।

"निरीह पशु को न मारो, गाड़ीवान", स्वामी जी ने मुस्करा-कर गाड़ी छोड़ दी। इनसे बलवान और अकड़े हुए घोड़े तो हमारे मन की शक्तियों को कुंठित किए बंठे हैं। उन्हें संयम की मार से सीधे मार्ग पर बढ़ाओ। क्षणिक सुखों में जीवन व्यर्थ बरबाद हो रहा है। जरा मन तथा इन्द्रियों को वश में करके परमानन्द का अनुभव करो। ऐसा आनन्द जिसे प्राप्त कर ससार के सभी सुख नीरस जान पड़ेंगे। फिर उस युवती को सम्बोधन कर बोले, "जाओ बहन, क्षणिक सुख से अवकाश मिले तो चिरंतन सुख के विषय में सोच लेना। रूप सदा नहीं रहेगा। ज्ञान द्वारा प्राप्त सच्चा सुख ही शाश्वत सुख है।"

स्वामी जी चले गए। वह युवती देर तक उनकी बातों पर विचार करती रही। रूप के भंवरों को उसने अपने आस-पास मंड-राते देखा था। आज उसे वास्तविक 'पुरुष' के दर्शन हुए थे। उसी दिन से उसका जीवन ही बदल गया। अपनी सम्पत्ति को उसने निर्धनों में बांट दिया। स्वामी जी से ज्ञान प्राप्त कर वह सच्ची समाज सेविका बन गई।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्म सर्वोपरि सत्ता है। ब्रह्मचर्य में भी उस सत्ता का आभास रहता है। ब्रह्मचारी के समान शक्तिशाली और कोई नहीं होता। उसका तेज, उसकी शक्ति, उसका आकर्षण, दूसरों को बरबस अपनी ओर खींचते हैं। कोई भी बुराई उसकी आंच में भस्म हुए बिना नहीं रहती।

क्षमा-मूर्ति दयानन्द

स्वामी दयानन्द सरस्वती एक महान् आत्मा थे। हिन्दू समाज की कुरीतियों का नाश करने का बीड़ा उठाने पर रूढ़िवादी हिन्दू उनके विरोधी बन गए। कई तो उनके कट्टर शत्रु बनकर उनके प्राणों के ग्राहक बन बैठे। उन्होंने उन्हें मार डालने की कितनी ही योजनाएं बनाईं परन्तु जब सभी विफल हो गईं तो उन्होंने उनके रसोइये को बहुत-सा धन देकर अपनी ओर मिला लिया। विष-युक्त भोजन पकाकर जब वह उनके सामने ले गया तो उनकी सौम्य मूर्ति को देख उसके हाथ कांपने लगे। मन ने धिक्कारा, अरे नीच ! कुछ रुपये के बदले एक महानात्मा के जीवन से खेल रहा है। उसकी आंखों से आंसू झरने लगे। स्वामी जी से क्षमा मांग कर उसने वह खाना फेंक दिया और दण्ड मांगा।

स्वामी जी ने उसे बड़े प्रेम से अपने पास बिठाकर सुन्दर उपदेश दिया और दोनों ने उपवास किया। उसी दिन से वह रसोईया उनका प्रिय शिष्य बन गया और स्वामीजी की ज्ञान चर्चा में सम्मिलित होने लगा।

कुछ दिन बाद स्वामी जी को किसी ने अपने घर न्योता दिया। रसोइया षड्यन्त्रकारियों को जानता था। उसने स्वामी जी को सावधान कर दिया परन्तु सब पर समान रूप से प्रेम रखने वाले स्वामी बड़े आग्रह से दिये निमन्त्रण को अस्वीकार न कर सके। उनकी वहां बड़ी ही आवभगत हुई। स्वयं गृहपति चांदी के गिलास

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में दूध और चांदी की तश्तरी में मेवे रखकर ले आया। स्वामी जी को वह दूध कुछ गाढ़ा-सा लगा परन्तु बिना कुछ ध्यान दिये वे उसे पी गए। दूध में इलायची बादाम के साथ बारीक कांच भी डालकर खूब पकाया हुआ था। दूध को पीते ही स्वामी जी का सारा शरीर जलने लगा। अंग-अंग जैसे कट रहा था। उनकी दशा बिगड़ने लगी। झट से कुछ लोग उन्हें उनके निवास पर ले आये।

गृहपति को अब होश आई। इतने बड़े महात्मा, एक समाज-सेवक की उसने घर बुलाकर हत्या की थी। वह पश्चात्ताप की अग्नि में जलता हुआ रोता-बिलखता वहां पहुंचा। स्वामी जी के चरणों में सिर रखकर वह गिड़गिड़ा रहा था। इधर स्वामी जी की अन्तिम घड़ी निकट आ गई। उन्होंने अपने शिष्य को बुलाकर कहा, "इन्हें उठा दो। कह दो, मैंने क्षमा कर दिया। सावधान ! इस घटना की चर्चा किसी से न करना। मैं मानव को भय, कुविचारों और कुरीतियों से मुक्त करना चाहता हूँ। मेरे लिए जितना कार्य था मैं कर चुका। अब इसको आगे बढ़ाने का उत्तरदायित्व आप लोगों पर है। जाओ, जीवन को संयत बनाकर कर्म मार्ग पर आरूढ़ हो जाओ।"

कुछ क्षण घबराहट में व्यतीत हुए। फिर स्वामी जी की शान्त आत्मा परमात्मा में लीन हो गई। ज्योति में ज्योति मिली तो जीवन-ज्योति बुझ गई।

प्रायश्चित स्वरूप उनके हत्यारे ने अपनी सम्पत्ति हिन्दू समाज की सेवा में लगा दी और स्वयं अकिंचन बन कर सेवा कार्यों में जुट गया।

बड़े लोग छोटों के दोषों की ओर ध्यान न देकर अपना कार्य करते जाते हैं। उनके जीवन दूसरों की राह में ज्योति-स्तम्भ बन जाते हैं। कई बार दुष्ट व्यक्ति उनका मार्ग संकीर्ण बना देने का प्रयास करते हैं। हमें विशाल हृदय से महापुरुषों की बातों को सुनना
CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। उनकी अच्छी बातों को अपनाकर उनके शुभ कार्यों में सहयोग देना चाहिए। एक दीप दूसरे को जलाता जाय तो संसार उज्ज्वल हो जाय। सब लोग अच्छे कार्यों में रुचि रखें तो विश्व से बुराईयों का नाश हो जाय। फिर यह संसार कितना सुन्दर क्रीड़ा-स्थल बन जायेगा।

अहंकार पर विजय

जाजलि महान् तपस्वी थे। कई वर्षों तक एक स्थान पर एक पांव के सहारे खड़े रहकर वे प्रभु का नाम स्मरण करते रहे। यहां तक कि उन्हें वृक्ष का ठूंठ समझकर एक पक्षी 'युगल' ने उनकी जटाओं में घोंसला बना लिया। वे फिर भी तपस्या में मग्न उनके कलरव का आनन्द लेते रहे।

पर्याप्त समयोपरान्त उन्हें अपनी साधना फलीभूत होती दृष्टि-गोचर हुई। उनके मन में अपूर्व शान्ति व आनन्द का उदय हुआ। वे अपने स्थान से चले। नदी में स्नान कर जल में अपना प्रतिबिम्ब देखा तो उन्हें लगा उनके मुख की कांति बढ़ गई है और वे एक तेजोमय व्यक्तित्व प्राप्त कर चुके हैं। ऐसा विचार आते ही उन्हें अपनी तपस्या का अभिमान हो गया। वे भोजन की खोज में तथा लोगों को अपनी ज्ञान-चर्चा से प्रभावित करने बस्ती की ओर चल पड़े। अभी वे थोड़ी ही दूर चले थे कि एक चिड़िया ने बीट कर दी। जाजलि नहा-धो चुके थे। एक बार फिर स्नान करने की इच्छा नहीं थी। उन्हें क्रोध आ गया। ज्यों ही क्रोध में भर कर उन्होंने पक्षी की ओर देखा वह भस्म होकर नीचे आ गिरा।

"ओह, मुझ में इतनी शक्ति आ गई है।" जाजलि का अभिमान बढ़ गया। इन्हीं विचारों में लीन गांव में पहुंचे। पहले घर के द्वार पर ही उन्होंने अलख जगाई। "नमो नारायण ! द्वार पर महात्मा भिक्षा के लिए पधारे हैं।" 'अभी आती हूं, महात्मन्", गृह-स्वामिनी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मधुर स्वर था। परन्तु दस-पन्द्रह मिनट तक कोई दिखाई न दिया। जाजलि ने फिर पुकारा, "नमो नारायण।" इस बार गृह-स्वामिनी बड़ी शीघ्रता से आंचल सम्भाले एक हाथ में भोजन लिए द्वार पर आई। "क्षमा करें, महाराज, पति की सेवा में लगी थी, कुछ देर हो गई। पति बीमार हैं। उन्हें एकदम छोड़ न पाई।" जाजलि क्रोध से भरे थे। मुख लाल हो रहा था। भिक्षा तो ले ली, परन्तु दर्प-पूर्ण नेत्रों से गृहणी की ओर देखा। गृहणी मुस्करा दी, "क्षमा करें, साधु! आपको क्रोध शोभा नहीं देता। वैसे मैं कोई निरीह पक्षी तो हूं नहीं जिसे आप क्रोध से भस्म कर देंगे।" जाजलि स्तब्ध रह गए। इस साधारण स्त्री को कैसे पता लगा कि मैं अभी एक पक्षी को भस्मकर आया हूं। "आपने कैसे जाना देवी?" जाजलि कुछ नम्र हो चले थे। "यह तो प्रत्यक्ष है महात्मन् कि आपने तपस्या वहुत की है परन्तु अपने अहंकार को जीता नहीं है। मन पवित्र हो, अहंकार रहित हो तो तपस्या की आवश्यकता नहीं रहती। फिर चाहे कोई गृहणी हो या काम-काजी बनिया, महात्मा हो या व्याध, अपने कार्य करते हुए सभी परम तत्व को पा जाते हैं। उस तत्व को जान लेने पर शेष सब स्वयं ही विदित हो जाता है। आप इस विषय में और जानना चाहें तो अगले गांव में तुलाधार के पास जाएं। मुझे अपने पति की सेवा में जाने की आज्ञा दें।"

जाजलि को अपनी भूल ज्ञात हुई। एक साधारण स्त्री मुझ से अधिक जानती है। तो भी वे तुलाधार के पास गए। वह एक साधारण बनिया था। महात्मा को उसने खड़े देखा तो उन्हें वहीं रुक जाने को कह कर अपना कार्य करता रहा। जब उस दिन की आवश्यकता के लिए कमा चुका तो उसने दुकान बढ़ा दी। फिर जाजलि के निकट आकर बोला, "क्षमा कीजिए महात्मन्, मुझे कुछ देर हो गई। आपकी आवभगत भी न कर सका। अब चलिए मेरे घर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पधारिये। वहीं आप से कुछ ज्ञान-चर्चा भी होगी।" "ज्ञान-चर्चा, आपको कैसे विदितहुआ कि मैं आपसे ज्ञान-चर्चा करना चाहता हूं। सात वर्ष एक पांव पर खड़े रहकर तपस्या करने वाले महात्मा एक साधारण बनिये से ज्ञान-चर्चा करना अपमान समझ रहे थे। तो भी वे दंग थे। यह साधारण गृहस्थी लोग मुझ से अधिक कैसे जान रहे हैं। तुलाधार हंस पड़ा, "महाराज आप तो तपस्वी हैं, इतनी तपस्या करने पर भी इस रहस्य को जान न पाए। तपस्या से आपने शरीर तो सुखा डाला परन्तु अभिमान व क्रोध की कोंपलें हरी रह गईं। उन्हें जड़ से क्यों न उखाड़ दिया। महात्मन्, वही तो मुक्ति पथ पर बाधक बन उठती हैं। क्रोध व अहंकार का परदा दूर हो तो प्रभु समक्ष हैं। प्रभु को जाना तो सर्वस्व जाना जाता है। हम तो गृहस्थी हैं। त्याग, तपस्या क्या जानें। हां, नम्रता से, सत्य-भाषण से तथा ईमानदारी से जीवन व्यतीत करने का प्रयास करते हैं। प्रभु की कृपा है कि मन सन्तुष्ट, शान्त व आनन्दमय बन गया है।"

जाजलि का रहा-सहा अभिमान भी जाता रहा। उन्होंने तुला-धार के चरणों का स्पर्श कर उनसे विदा मांगी। ग्रामीण स्त्री व तुलाधार के वचनों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने शेष जीवन लोक सेवा में बिता दिया। उन्होंने एक आश्रम बनवाया जहां दूर-दूर से बालक शिक्षा ग्रहण करने आते थे।

तपस्या ही नहीं दैनिक जीवन में भी क्रोध व अभिमान मनुष्य की उन्नति में बाधक बन जाते हैं। क्रोधी से कोई प्रेम नहीं करता और अभिमानी किसी से कुछ सीख नहीं सकता। यह दोनों अवगुण श्रेष्ठ व्यक्ति को भी नीचे गिरा देते हैं। नम्र व सद्गुणी व्यक्ति सबसे मान पाते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्मवीर फतह सिंह ज़ोरावर सिंह

गुरु गोविन्द सिंह सिक्खों के दशम व अन्तिम गुरु थे। हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए उन्होंने कुछ बांके जवानों को एकत्र करके उनसे धर्म पर बलिदान होने की प्रतिज्ञा करवाई। उन्हें उन्होंने पांच 'क' (केश, कंघा, कड़ा, कच्छा व कृपाण) चिन्ह रखने का आदेश दिया जिससे वे वीर सेनानी के रूप में जानें जा सकें तथा बलिदान होने को सदा तत्पर रहें। पुकार पर क्षण भर में घर-द्वार छोड़ निकल सकें।

ऐसे धर्मवीर, ज्ञानवान् गुरु के पुत्र भी उनके अनुरूप ही थे। उनके दो बड़े पुत्र उनके साथ यवनों के विरुद्ध युद्ध करते हुए वीर-गति को प्राप्त हुए। दो छोटे पुत्र फतह सिंह और जोरावर सिंह को जो सात और नौ वर्ष के थे यवनों ने कैद कर लिया। उनके ही एक कृतघ्न नौकर ने उन्हें यवनों के सुपुर्द कर दिया था। वह नौकर तो पारितोषिक लेकर चला गया। इमाम व काजी लोग इन निर्दोषों का न्याय करने बैठे। बहुत देर विचार-विमर्श करके यह फैसला हुआ कि यदि यह दोनों मुसलमान बन जाएं तो इन्हें छोड़ दिया जायेगा। भरी सभा में काजी बोले, "बालको, आपके रूप व आयु को देख हमें दया आ गई है। हम तुम्हें मारना नहीं चाहते। आप मुसलमान बन जाओ तो तुम्हें बहुत-सा इनाम देकर छोड़ दिया जायेगा।" साधारण बालक होते तो मोह में पड़ भी जाते परन्तु वे तो सच्चे सिंह थे। वीर सेनानी के पुत्र गरज उठे, "जबान सम्भाल कर बोलो, काजी महाशय! हमारे हाथ बंधे न होते तो ऐसे शब्द कहने वाले की जीभ खींच लेते। हमारे हाथ में तलवार दो। फिर देखो गुरु के पुत्रों को छेड़ने का मजा।"

जैसे बिजली गिरी हो, कुछ क्षण तो सभा सकते में आ गई। काजी का मन वीर बालकों के प्रति श्रद्धा से झुक गया। परन्तु इमाम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोला, "सिंह के बच्चों को अभी ही मसल दो काजी, नहीं तो बड़े होकर जीना हराम कर देंगे।" कुछ क्षण काजी चुप रहा। फिर उसने उन दोनों को दीवारों में चुन देने की आज्ञा दे दी।

दूसरे ही दिन दोनों बालकों को पास खड़ा करके आस-पास दीवार बनाई जाने लगी। एक ईंट ठोके जाने पर उनसे पूछा जाता था, "मुसलमान बनना स्वीकार है?" परन्तु आन के पक्के वीर बालक मन ही मन प्रभु का स्मरण कर अपना बलिदान दे रहे थे। अचानक बड़े भाई जोरावर की आंख से आंसू टपका। छोटा इसे सहन न कर सका, "यह क्या है भैय्या! ऐसा शुभ समय कहीं रोने का है।" "मैं रो नहीं रहा, फतह सिंह, मुझे दुःख है कि संसार में पहले मैं आया और तुम पहले जा रहे हो।" फतह सिंह छोटा था। उसका शिर शीघ्र ही दीवार में धंसा जा रहा था। फतहसिंह हंसा और जोरावर भी। पास खड़े यवनों का मन दहल गया। शर्म से उनके मुंह काले हो गए। शायद क्षण भर तो उन्होंने अवश्य सोचा होगा कि हमसे इसलाम की क्या सेवा हुई। अनादि काल से दूसरों पर अपने विचार व धर्म को लादने का प्रयास होतारहाहै। कईयों ने बल से, कपट से, तथा सेवा भाव का आडम्बर रच कर दूसरों के धर्म को बदल दिया है। वे समझते हैं कि इससे वे अपने धर्म की सेवा करके परमात्मा को प्रसन्न करते हैं। सभी धर्म परमात्मा का गुणगान करते हैं। किसी का अत्याचार से धर्म बदल देना अन्याय है। प्रभु अन्यायी व अत्याचारी को कभी क्षमा नहीं करते।

हमें अपने धर्म में दृढ़ रहते हुए अन्य धर्मों को आदर से देखना है। सभी धर्म-ग्रन्थ उस महान् आदि धर्म व ज्ञान का एक अंशमात्र हैं। सभी धर्म-ग्रन्थों को इकट्ठा रख दिया जाय तो परमात्मा के महान् ज्ञान-सागर का वर्णन नहीं हो पाता। इसलिए यह आवश्यक है कि जीवन में अधिक से अधिक धार्मिक ग्रन्थों को पढ़ा जाय। जितना हम अधिक पढ़ते हैं उतना हम जानते हैं कि हिन्दू, मुस्लिम,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईसाई आदि बनाने की अपेक्षा अच्छे मानव बनाना अधिक आवश्यक है। अच्छा व्यक्ति धर्म के सही सिद्धान्तों पर चलता हुआ परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता है।

धर्मज्ञ मुकुन्द

औरंगजेब के अत्याचारी युग में महा प्रभु स्वामी श्री प्राणनाथ जी ने सत्य धर्म की स्थापना तथा हिन्दू-मुस्लिम एक्य के प्रचार का कार्य अपने हाथों में लिया। उन दिनों आने जाने के साधन पर्याप्त न थे। प्रत्येक स्थान पर स्वामी जी स्वयं न जा सकते थे। उन्होंने अपने कुछ प्रवीण शिष्यों को इधर-उधर भेजा कि वे पीड़ित जनता को सहारा दें। हिन्दू धर्म की बिखरी शक्तियों को एकत्र करके उन्हें इकट्ठे प्रम-पूर्वक रहने का उपदेश दें। अपने प्रवीण शिष्य मुकुन्द स्वामी को उन्होंने उदयपुर के राणा भावसिंह हाड़ा के पास भेजा।

राणा बड़े धर्म-निष्ठ थे। वे चाहते थे कि उनकी प्रजा धार्मिक हो। हिन्दुओं को एक सूत्र में बन्धे देखना चाहते थे परन्तु उनके कुछ चाटूकार, अकर्मण्य व अज्ञानी सलाहकार उन्हें कोई ठोस कार्य करने नहीं देते थे। कुछ मूर्ख ब्राह्मणों ने उन्हें यवनों की शक्ति से डरा कर अपने क्षत्रियोचित कर्म से भी विमुख कर रखा था। ऐसे बुद्धिहीन सलाहकारों से घिरा राजा ऐश्वर्य-प्रिय बन गया। कुछ रूढ़िगत धार्मिक कृत्यों को इन ब्राह्मणों के भरोसे करता हुआ वह आमोद-प्रमोद में लीन हो गया। ये पुरोहित लोग नित्य नवीन पूजा-पद्धति निकाल, दान ले लेकर कोष खाली करवा रहे थे और स्वयं इनके घर महलों के समान ऐश्वर्य-पूर्ण बनते जा रहे थे।

मुकुन्द स्वामी जब उदयपुर पहुंचे तो राणा को मिलने के प्रयत्न में लग गए। राणा को मिलने से पूर्व राज-पुरोहित की अनुमति आवश्यक थी। राज-पुरोहित ने प्रथम मिलन में ही मुकुन्द स्वामी के ज्ञान को जांच लिया। वह इन्हें दूर भगा देना चाहता था परन्तु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने बड़ी चतुराई से काम लिया। रात भर उनकी खूब सेवा की। दूसरे दिन राणा के पास जाने का कार्यक्रम निश्चित हुआ। प्रातः जंगल पानी के लिए उन्हें वह नदी तट पर ले गया। नदी पर ले जा कर उसने अपनी छड़ी से मुकुन्द स्वामी की खूब पिटाई की। उन्हें नदी पार भेजकर उस क्रूर ने कहा, "अब इधर दिखाई दिये तो जान से हाथ धो बैठोगे।" मुकुन्द स्वामी को सभा में लेजाकर वह अपनी आमदनी गवाना नहीं चाहता था।

मुकुन्द स्वामी क्षुब्द तो हुए परन्तु प्रभु का स्मरण कर अपने कर्त्तव्य-पथ से विचलित न हुए। उन्होने एक योजना बनाई। उन्हें विदित था कि राणा प्रातः नदी किनारे बने देवी के मन्दिर में दर्शन करने आते हैं। वे बहुत प्रातः ही स्नान-ध्यान से निवृत्त होकर मूर्ति के पीछे छिप रहे। ज्यों ही राजा ने देवी को नमन कर शिर उठाया मुकुन्द स्वामी ने प्रसाद की थैली उन्हें थमा दी। उस थैली में उन्होंने धर्म सम्बन्धी कुछ गूढ़ प्रश्न भी लिखकर डाल दिये और राजा से कहा कि अपने पुरोहित से इन प्रश्नों की व्याख्या करवाएं।

राजा इस आकस्मिक परिचय से दंग रह गया। बड़े प्रेम से अपने रथ में बिठा कर उन्हें अपने दरबार में ले गया। "चलिये वहीं आपके सामने धर्म चर्चा होगी।" मुकुन्द स्वामी तो चाहते ही यही थे। वे चुपचाप चल दिये।

सभा में धर्म-चर्चा होने पर राणा मुकुन्द जी के ज्ञान पर मुग्ध हो गए। उन्होंने उनके यहां आने का कारण पूछा तो मुकुन्द जी ने श्री प्राणनाथ जी का वह पत्र उन्हें दिया जिसमें उन्होंने राणा को धर्म के लिए आह्वान दिया था। राणा ने उस पत्र पर विचार करने का आश्वासन दिया और अपने राज पुरोहित को मुकुन्दजी की सेवा का भार सौंपना चाहा।

अब तक मुकुन्द स्वामी ने पुरोहित के विषय में कुछ न कहा था। उन्होंने विचार किया कि अन्याय को सहन करना तथा उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दमन के लिए कुछ न करना उसे बढ़ावा देने के समान है। दुष्ट को दण्ड तो मिलना ही चाहिये। उन्होंने अपनी पीठ खोलते हुए राणा से कहा, "यह तो मेरी पहले भी सेवा कर चुके हैं, राणा।"

पीठ पर छड़ियों के निशान देख राणा रो उठा। उसने पुरोहित को सभा से निकलवा दिया और मुकुन्द स्वामी को अपने महलों के निकट विश्राम गृह में रखा। अब पुरोहित रामदास स्वामी जी के चरणों में पड़ रहा। "क्या तुम्हारे गुरु ने दूसरों का रोजगार बन्द करने की आज्ञा दी है ?" हम बाल-बच्चे वाले हैं। हम पर कुछ तो दया करो। मुकुन्द स्वामी ने राणा से कहा, "इन्हें रहने दो राणा। हम सदा आपके पास नहीं रहेंगे। आपके धर्म कार्यों में इनके न रहने से बाधा पड़ेगी।" राणा मान गए और उन्होंने आधे वेतन पर राज पुरोहित को रख लिया।

मुकुन्द स्वामी कुछ दिन वहां रहे। उन्होंने राणा को धर्म का वास्तविक स्वरूप समझाया। क्षात्र-धर्म की महानता बता कर उसे हिन्दू प्रजा की रक्षा करने को तैयार कर लिया और वहां से अन्य राजाओं को श्री प्राणनाथ का सन्देश देने चल पड़े।

उनके जाते ही न जाने कैसे राणा की मृत्यु हो गई और हिन्दू धर्म का एक और दीपक बुझ गया।

स्वार्थी धर्म का संकीर्ण अर्थ लेने वाले दुराग्रही व्यक्ति जब धर्म की बागडोर अपने हाथों में ले लेते हैं तो धर्म और समाज का पतन होता ही है। धर्म का अर्थ अकर्मण्यता नहीं, अहिंसा का अर्थ काय-रता नहीं। धर्म, सत्य तथा अहिंसा शूरवीरों के अस्त्र हैं। महात्मा गांधी के शब्दों में:—

"मैं कायरता को किसी भी हालत में सहन नहीं कर सकता। यदि आप समझते हैं कि मेरे सत्य व अहिंसा के प्रचार से कायरता पैदा होगी तो मैं आपको उसे छोड़ देने की सलाह दूंगा। आप कायरों की तरह मरें उसके बदले शूरवीरों की तरह धर्म की रक्षा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में प्रहार खाते हुए मरना मैं श्रेयकर मानता हूं।"

शुभ कार्यों को करने में कठिनाइयों का सामना तो करना ही पड़ता है। परन्तु धर्म की रक्षा करने वालों की रक्षा धर्म स्वयं करता है। परमात्मा आड़े में भक्त की रक्षा का बीड़ा उठाते हैं और उसे सत्य मार्ग पर चलते रहने की शक्ति देते हैं।

वीर माता सारंधा

शौर्य पुंज महाराजा छत्रसाल का नाम हिन्दू धर्म के इने-गिने प्रमुख रक्षकों में गिना जाता है। शिवाजी, राणा प्रताप, गुरु गोविन्द सिंह और महाराजा छत्रसाल जैसे नरश्रेष्ठ ही थे जिन्होंने मुगलों के युग में डगमगाती हिन्दू धर्म की नौका को किनारे लगाया। छत्रसाल माता सारंधा के पुत्र थे।

वीरों का जीवन कोई एक दो घटनाओं में वर्णन नहीं किया जाता। पग-पग पर उनके जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब उन्हें आन की रक्षा के लिए सर्वस्व न्यौछावर करना पड़ता है। अकस्मात कोई परिस्थिति आ जाने पर ही कोई वीर नहीं बन जाता। बाल्य-काल के संस्कार, स्वभाव तथा विचार ही पनप कर यौवन में वीरोचित कार्य करने की प्रेरणा देते हैं। मां सारंधा को बाल्यकाल में उत्तम संस्कार मिले थे। अपने भैय्या के साथ घुड़सवारी, तीर चलाना तथा अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग वे भली प्रकार सीख चुकी थी।

माता पिता का देहान्त हो जाने के कारण विवाह से पूर्व सारंधा अपने भाई भाभी के साथ रहा करती थी। राजपूतों को तो आये दिन युद्धों का सामना करना ही पड़ता था सो सारंधा का भाई युद्ध में गया था और ननद भाभी एक ही कमरे में पड़ी रात देर तक उसकी ही बातें किया करती थीं। एक रात बड़ी देर तक वे बातें ही कर रही थीं कि नीचे धीरे से किवाड़ पर किसी ने थपकी दी। "कौन है" सारंधा ने झरोखे से झांक कर पूछा। "मैं हूं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारंध।" स्वर परिचित था परन्तु धीमा। सारंधा समझ गई भय्या युद्ध से भाग आया है। झट से नीचे उतरी। भाई का उतरा हुआ चेहरा, अस्त्र-शस्त्रों का कहीं पता नहीं। "भैया! तुम इतने आंधी पानी में क्या भाग कर आये हो?" भैय्या चुप थे। 'ओह, तुम ऐसे कायर हो। जाओ तुम भीतर, तुम्हारी पोशाक पहन युद्ध में मैं जाऊंगी। क्या इसी दिन के लिए तुम्हें राखी बांधा करती थी?"

राजपूत के लिये इन शब्दों का सुनना डूब मरने से भी बुरा था। उसी क्षण वह युद्ध को लौट गया और नागिन सी फुफकारती सारंधा अपने कमरे में चली गई।

अन्दर बैठी भाभी ने सारंधा और अपने पति की बात सुनी थी। अपने पति का यूं लौट जाना उसे अच्छा न लगा। ननद को ताना देती हुई बोली "अपना पति होता तो हृदय में छुपा लेती।"

"न", सारंधा ने बल खाते हुए कहा। "उसके कलेजे में छुरी भोंक कर स्वयं भी मर जाती।" "देखा जायेगा।" भाभी ने बात बढ़ाना ठीक न समझा।

सारंधा को अपने कहे वचन पूर्ण करने का अवसर भी मिल गया। धंधेरों से युद्ध करते-करते चम्पतराय (सारंधा के पति) अत्यधिक घायल हो गये। किले में उन्हें आराम के लिये लाया गया। उनकी अनुपस्थिति में उनकी सेना हार गई और शत्रु ने किले पर धावा बोल दिया। घावों के बिगड़ जाने के कारण चम्पतराय बेसुध पड़े थे। किले में भोजन और अस्त्र भी पर्याप्त न थे। सेनापति ने सारंधा से विनय की कि आप गुप्त द्वार से राणा को लेकर निकटवर्ती गांव में चली जाए तो हमारी रक्षा हो सकतीहै। वे लोग राणा को ही पकड़ने आ रहे हैं। जीवित रहते हम यह कार्य होने तो न देंगे परन्तु यदि आप कुछ दिन छुपकर रहें तो राणा के स्वस्थ होते ही हम पुनःस्थिति सम्भाल लेंगे।"

सारंधा को उसकी बात माननी पड़ी। एक डोली में सारंधा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और चम्पतराय को बिठाकर कुछ कहार गुप्त द्वार से उन्हें ले चले । कुछ ही कोस चल पाये थे कि शत्रू सनिकों ने उन्हें आ घेरा । कहार शूरवीर योधा थे । उन्हें वहां छोड़ शत्रुओं से जूझ पड़े । सारंधा पति की रक्षा के लिए खड़ी थी । जो भी सैनिक इधर-उधर से पास आते उन्हें पल भर में काट गिराती थीं । धीरे धीरे उनके सारे कहार गिर रहे थे । चम्पतराय कुछ होश में थे । परन्तु उनमें खड़े होने की शक्ति नहीं थी । निःसहाय से होकर बोले, "अब क्या हो सारंधे ।" "जो प्रभु को स्वीकार है" अनमनी सी सारंधा बोली । "मुझे पशुओं की तरह बन्धा देखोगी ।" सारंधा चुप थी ।

"वे लोग तुम्हें भी कंद कर लेंगे ।" मैं अकेली क्या करूं ? सारंधा चीख उठां । उसी क्षण भाभी का ताना याद आया और अपनी प्रतिज्ञा भी । परन्तु उस प्रतिज्ञा को मूर्तरूप देना कठिन लग रहा था । "मैं अशक्त हूँ सारंधा, नहीं तो तुम्हें कष्ट न देता । सच्ची वीरांगना की तरह मुझे इस भार रूप जीवन से मुक्त करो और अपनी रक्षा करो ।" सारन्धा संभल गई थी । "जो आज्ञा स्वामी ।" उसने अपनी कटार से पति का हृदय बींध दिया । वही कटार वह अपने हृदय में मारने वाली थी कि शत्रू सेनापति हाथ बांधे सामने खड़ा हो गया । "ऐसा न करो मां, हमें जो आज्ञा दोगी वही किया जायेगा ।" "करोगे न !" सारन्धा चण्डी की भांति अट्टहास कर उठी । भले चील कौवे हमारे शरीर को नोंच डालें । आप लोग उसे न छूना" और अपने पति के रक्त से सनी तलवार को सीने में चुभा कर सारन्धा सदा के लिए सो गई ।

"क्या कहर दिल पाया है बुन्देलों ने," ऐसा कहकर धन्धेरे चले गये । सारन्धा के पुत्रों ने उनकी लाशों को ढूँडकर उनका दाह संस्कार किया ।

शरीर नाश्वान है । मृत्यु अवश्यंभावी है । ऐसा सोचकर ज्ञानी जन और कर्त्तव्य-निष्ट व्यक्ति शरीर का मोह नहीं करते । साधा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रण व्यक्तियों को कौन जानता है। परन्तु आन पर मिटने वालों की याद कायरों में भी जीवन फूंकती है। ऐसे व्यक्तियों का नाम अमर हो जाता है। इतिहास इन्हीं के नामों व गाथाओं से लिखे जाते हैं। आवश्यकता पड़ने पर ऐसे ही लोग युग का इतिहास बदल देते हैं।

वीर बालक अभिमन्यु

हमारा साहित्य और इतिहास वीर गाथाओं से भरा है। महाभारत युद्ध में महावली भीष्म, महावली भीम, दानवीर कर्ण, धनुर्धारी अर्जुन आदि का वर्णन आता है। प्रत्येक वीर की वीरता पर मन मुग्ध हो जाता है। सिर श्रद्धा से झुक जाता है। अभिमन्यु की कहानी पढ़कर शरीर में रोमांच हो आता है। ऐसा लगता है कि अभिमन्यु हमारा अपना ही था। उसकी कहानी पढ़ते हुए एक प्यारा सुकुमार चेहरा, बलिष्ट शरीर, तेजोमय व्यक्तित्व आंखों के सामने उभर आता है। उसकी कथा कहानी न रहकर हमारे जीवन का अंग बन जाती है।

हां तो युद्ध जोरों पर था। कौरव पक्ष के लोग धड़ाधड़ मरते जा रहे थे। दुर्योधन को अपनी हार प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी। उसने अपने सेनापति आचार्य द्रोण को जाकर खूब भला बुरा सुनाया। उनपर पक्षपात का दोष लगाया और कहा—हमारी हार का कारण आप ही हैं। गुरु द्रोणाचार्य जानते थे कि पांडव पक्ष में भगवान हैं। स्वयं पांडव सत्य की रक्षा के लिये युद्ध कर रहे हैं। वे विजयी तो होंगे ही परन्तु स्वयं अपने ऊपर पक्षपात का आरोप वे सहन न कर सके। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि दूसरे दिन वे किसी एक पांण्डव को अवश्य मार देंगे।

पांडवों को मारना सहज नहीं था। सारी रात जागकर गुरु द्रोणाचार्य विचार करते रहे। सारे युद्ध का नक्शा खींचकर उन्होंने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जान लिया कि कौन कहां लड़ रहा है ? अर्जुन चक्रव्यूह का युद्ध जानते थे। वे जहां युद्ध कर रहे थे उसकी दूसरी ओर उन्होंने चक्रव्यूह बना दिया। यह उस काल का सबसे कठिन युद्ध था। उसमें एक ऐसा गढ़ बनाया जाता था जिसे शक्ति से नहीं युक्ति से भेदा जा सकता था और वह युक्ति गुरु द्रोणाचार्य ने अर्जुन के सिवा किसी को सिखाई न थी। सो चक्रव्यूह बनाकर प्रातः ही युद्ध के लिये ललकार दिया आचार्य ने।

पांडव पक्ष में घोर निराशा छा गई। अर्जुन को लौटा लाना संभव नहीं था और कोई यह कला जानता नहीं. किसे उस दिन युद्ध का सेनापति बनाया जाये ? अभिमन्यु उस समय अठारह वर्ष के थे। कुछ माह पूर्व उनका उत्तरा से विवाह हुआ था। वे अपने महल में विश्राम कर रहे थे। उनके एक नौकर ने आकर सभा में छाये सन्नाटे की चर्चा की। वे एकदम उछल खड़े हुए। अस्त्र-शस्त्र सजाकर सभा में जा पहुँचे। अपने अग्रजों और आचार्यों को नमस्कार कर युधिष्ठिर के सामने खड़े हो गये। 'यदि राजन आज्ञा दें, तो आज युद्ध का सेनापति मैं बनना चाहता हूं।" "तुम", युधिष्ठिर ने चौंक कर पूछा। सारी सभा उस कोमल शब्द को सुन आश्चर्य में आ गई। "क्या तुम जानते हो बेटा कि आज चक्रव्यूह युद्ध है।" "जानता हूं तात ! तभी तो कह रहा हूं।" "परन्तु तुमने यह कला कब सीखी !" "जन्म से भी पहले। पिताजी ने माँ को चक्रव्यूह की विधि रेखा खींच कर समझाई थी। परन्तु सातों द्वार भीतर जाने तक की कथा सुनकर वे सो गईं। बस उतना ही मैं जानता हूं। वापिस आना मुझे ज्ञात नहीं। तो भी एक बार गढ़ भेद लिया तो हमारी सेना उन्हें अवश्य नष्ट कर देगी, ऐसा मुझे विश्वास है।" भीम, नकुल, सहदेव सभी अभिमन्यु की सहायता और रक्षा करने को तय्यार हो गये। युधिष्ठिर एक बालक को भूखे भेड़ियों के बीच भेजना नहीं चाहते थे परन्तु अभिमन्यु की दृढ़ता देख वे मान गये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर प्रश्न भी तो प्रतिष्ठा का था !

इतनी बड़ी सेना । भीम जैसे गदाधारी । नकुल सहदेव जैसे धनुर्धर पीछे चल रहे हैं और अठारह वर्ष का बालक उनका नेता है । सभी वीर सेनानी मन ही मन मुस्करा उठे । अभिमन्यु की विजय की कामना की । कौरव पक्ष भी शत्रु का नेता देख आश्चर्य में पड़ गया । परन्तु युद्ध तो होना ही था । बड़े उत्साह में भरकर अभिमन्यु ने पहला द्वारा तोड़ दिया । जयद्रथ घायल हो गए । कौरव सेना में भगदड़ पड़ी । भीम, नकुल सहदेव उनसे लड़ने में लीन हो गए । अभिमन्यु भीतर घुस गए । कौरवों की और सेना ने आकर पांडवों को वहीं रोक दिया और कला न जानने के कारण कोई भीतर जा भी न सका ।

अकेला अभिमन्यु एक के बाद एक द्वार तोड़ता गया । उसने पीछे घूमकर भी नहीं देखा कि कोई मेरे पीछे भी है या नहीं । बड़े-बड़े महारथियों को वह इस प्रकार मूर्छित करता जा रहा था मानो उसके हाथ में कोई जादू की छड़ी हो । द्रोणाचार्य, दुःशासन, जयद्रथ कर्ण, शकुनि आदि सभी महारथी एक बार तो अभिमन्यु के सामने आकर पीछे हट गये । उसके अस्त्रों की मार वे सहन न कर सके थे । अभिमन्यु ने सातवां और अन्तिम द्वार भी तोड़ डाला । अब बाहर निकलना था । चक्रव्यूह में भीतर जाने और बाहर निकलने के मार्ग अलग होते हैं । भीतर खड़े होकर वह वीर बालक इधर उधर देखने लगा । उसके अधूरे ज्ञान पर द्रोणाचार्य मुस्करा उठे ।

अब अभिमन्यु ने देखा उसके चाचे मामे कोई भी तो वहां नहीं । पांडव पक्ष का एक भी सैनिक उसके पीछे न आ सका था । तो भी उसने साहस न छोड़ा । वहीं खड़ा होकर युद्ध करने लगा । सात महारथी इकट्ठे उस पर वार कर रहे थे और वह अकेला उनका सामना कर रहा था । द्रोणाचार्य उसकी वीरता पर मुग्ध थे परन्तु इस समय तो वह उनका शत्रु था । सो युद्ध होता रहा । अभिमन्यु

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सारथी मरा। घोड़ा मर गया। सभी अस्त्र समाप्त हो गये। वे रथ से कूद पड़े और रथ का पहिया तोड़ उसे ही घुमाने लगे। यह युद्ध क्या था? भेड़ों में घुसे सिंह का दृश्य उपस्थित हो गया। जो भी देखता दांतों तले जीभ दबा लेता था। तीरों से शरीर भर गया। रिस-रिस कर रक्त बह रहा था परन्तु न जाने किस बल पर अभिमन्यु लड़े ही जा रहा था। पीछे से अचानक एक विषैला तीर उसकी गर्दन में लगा। उसके विष के प्रभाव से वह मूर्छित होकर गिर गया। सातों महारथियों ने मिलकर उसे मार डाला।

अभिमन्यु शरीर छोड़ गये। परन्तु उनका उद्देश्य 'चक्रव्यूह भेदन' तो पूर्ण हो चुका था। एक अकेले महारथी के सामने सम्पूर्ण कौरव सेना ने मुंहकी खाई थी और अन्याय से एक बालक की हत्या की थी।

अर्जुन ने जब इस अत्याचार की बात सुनी तो उन्होंने दूसरे दिन क्रोध में भरकर कई महारथियों के सामने जयद्रथ को मारकर आधी कौरव सेना का नष्ट कर दिया।

महाभारत युद्ध में कौरव नष्ट हुए। विजय पांडवों की रही। विजय के उल्लास में अभिमन्यु की अनुपस्थिति उन्हें दुःख देती रही।

आयु से कोई छोटा या बड़ा नहीं होता। महान् वही है जो समय पर अपनी योग्यता दिखाता हुआ अपने उद्देश्य को प्राप्त कर ले।

गुरु-भक्त शौर्यपुंज छत्रसाल

वीर माता सारन्धा की कहानी आपने पढ़ी है न! छत्रसाल उनके चौथे पुत्र थे। चम्पतराय को इस अनोखे बालक का पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

बाल्यकाल में ही छत्रसाल की वीरता की बातें दूर-दूर फैल गई थीं। अपने मित्रों के साथ भी वे युद्धों में सेनापति बनने के खेल खेला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते थे। मुगलों के अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध उस समय की प्रजा सिर उठा रही थी। छत्रसाल तथा उनके मित्र भी हर समय किसी भी परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहते थे। खडग तो उस युग में वीर बालकों की रक्षक और आभूषण बन चुकी थी।

छत्रसाल की परमात्मा में भी अपूर्व श्रद्धा और भक्ति थी। मां के साथ पूजा में निरन्तर बैठते थे। यही नहीं, प्रातःकालीन पूजा के लिए ताजे पुष्प भी वे ही चुनकर ला देते थे।

शीत के बाद नये फूल अभी कम ही निकले थे। सो एक दिन फूल चुनते हुए जब टोकरी भरी नहीं तो कुछ दूर निकल गए। अभी पौ फटी नहीं थी। थोड़ा अन्धेरा था। छत्रसाल ने घोड़ों की टाप सुनी। अपने दो-चार मित्रों के साथ वे सावधान होकर खड़े हो गए। उन्होंने देखा कुछ सैनिकों के साथ यवन सेनापति उसी बगीचे की ओर आ रहा है। शायद वे लोग कोई गांव लूटकर लौट रहे थे और कुछ काल उपवन में आराम करना चाहते थे। छत्रसाल उन्हें अनदेखा करके अपना काम करते रहे। सैनिक अपनी अव-हेलना सहन न कर पाये। सेनापति लगभग चीखता हुआ बोला—"हमें पानी पिलाओ छोकरे।"

छत्रसाल ऐसे सम्बोधन के आदी न थे। छोटों को आज्ञा पालन करना चाहिए परन्तु बड़ों को बोलने का ढग तो सीखना चाहिए। "वह कुंआ है, सेनापति। आप पानी पी सकतेहैं। मैं मां की पूजा के लिए पुष्प चुन रहा हूं। वे मेरी प्रतीक्षा कर रही होंगी। नहीं तो मैं ही पिला देता।" सेनापति आग-बबूला हो गया। इस नादान छोकरे की इतनी हिम्मत। फिर यह काफिर मूर्ति-पूजा ही तो करने को जा रहा है। क्यों न इसकी पूजा भंग करके सबाब ही लिया जाय। अपनी तलवार की नोंक से टोकरी उलट ही तो दी। "हो गई तेरी पूजा।' और सबके सब अट्टहास कर उठे। परन्तु वे भूल रहे थे कि

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने भूखे सिंह को छेड़ दिया है। छत्रसाल का खून खौल उठा। उन्होंने तलवार निकाली और यवन सैनिकों से भिड़ गए। यवन संख्या में सौ के लगभग थे और यह थे कुल चार-पांच बालक। तो भी बड़ी तत्परता से युद्ध करते रहे। सेनापति बुरी तरह घायल हो गया। दस बीस सिपाही मर भी गए। उधर किसी भी तरह बुंदेलों को सूचना मिल गई। कुछेक घुड़सवार बच्चों की सहायता को पहुंच गए। यवन पहले ही बालकों का लोहा मान चुके थे। उनके रक्षकों के आने पर भाग निकले।

छत्रसाल के माता-पिता इन्हें बाल्यकाल में ही छोड़कर स्वर्ग सिधार गए थे। अठारह वर्ष की आयु में इन्होंने बुन्देलों को एकत्र कर एक सेना बना ली। बुंदेलखण्ड के कई इलाकों पर अधिकार करके छोटा सा राज्य स्थापित किया और स्वतन्त्रता का झंडा गाड़ दिया। आस-पास के छोटे-मोटे राजा लोग इनके संरक्षण में आ गए और इनकी आधीनता में आततायी शासक का दमन करने के कार्य में लग गए।

औरंगजेब की सत्ता का मुकाबला करना आसान नहीं था। कई बार अपने अल्प साधनों के कारण छत्रसाल चिंतित हो उठते थे। उन्होंने शिवाजी से मिलकर उनकी सहायता करनी चाही। परन्तु शिवाजी ने सलाह दी कि हम अकेले ही इस कार्य को करने की क्षमता रखते हैं। अपनी योग्यता को पहचानो। अपने देश में ही यह कार्य करते जाइए। दोनों ओर से पड़ती मार से बड़ी से बड़ी सत्ता भी झुक जायेगी।

छत्रसाल बुन्देलखण्ड लौट आये। असंख्य कठिनाइयों का सामना करते हुए भी बुन्देले बराबर लड़ रहे थे। छत्रसाल अपने प्यारे सैनिकों को पूरा वेतन भी न दे पाते थे। कई बार इस चिंता के मारे उन्हें नींद ही न आती थी। ऐसे में इनके गुरु प्राणनाथ जी ने आध्यात्मिक शक्ति द्वारा इन्हें सभी चिंताओं से मुक्त कर दिया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सद्‌गुरु की आज्ञा और प्रेरणा से प्रभु अर्पण किये लोक कल्याण के काय के लिये छत्रसाल कटिबद्ध हो गये। अपनी दुधारी तलवार बंधाकर गुरुदेव ने शारीरिक शक्ति को भी दुगुना कर दिया। हीरे की खानों का वरदान पाकर धन की चिंता से भी मुक्त हो गए। अपने सद्‌गुरु की प्रेरणा लेकर अपने अपूर्व बल और दक्षता से छत्रसाल ने औरगजेव के विरुद्ध छोटी बड़ी दो सौ लड़ाइयों में विजय प्राप्त की। बुंदेलखण्ड एक काफी बड़ा राज्य बन गया। छत्रसाल की राज्य सीमा का वर्णन करते हुए तत्कालीन कवि ने कहा है:—

इत चम्बल इत नर्बदा, इत काशी उत टौंस।
छत्रसाल सौं लरन की रहो न काहू हौंस॥

छत्रसाल बड़े ही प्रजापालक राजा थे। प्रजा के दुःखों को दूर करके उन्हें अपार आनन्द मिलता था। लड़ाइयों से जो भी समय मिल पाता उसे वे जनहित कार्यों में लगा देते थे।

मन से छत्रसाल एक परम ज्ञानी सन्त थे। दूर-दूर के महात्मा लोग इनके आश्रय में आकर रहने लगे थे। छत्रसाल सभी धर्म वालों का आदर करते थे। औरंगजेब से उनके अन्याय और दमन नीति के कारण इनका विरोध था। परन्तु इनके अपने दरबार में कई मौलवी लोग निर्भयता से कुरान और हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में एकता खोजा करते थे। कई लोग गीता और कुरान दोनों ग्रन्थों को पढ़ना अपना धर्म मानते थे।

सर्व धर्म समन्वय का पाठ छत्रसाल ने अपने गुरु से सीखा और जीवन भर सभी धर्मों को मानने वालों को परस्पर निकट लाने का प्रयास करते रहे।

छत्रसाल कवि थे। उनकी वीरता भरी कविताएं कायरों में मन्त्र फूंकती थीं। भक्ति रस के भजन सुनकर नास्तिक भी झूम उठते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। कवि, सन्त, ज्ञानी जन इनके दरबार में अकबर की तरह मान पाते थे।

अस्सी वर्ष की आयु तक छत्रसाल एक ओर अन्याय के विरुद्ध तलवार चलाते रहे दूसरी ओर मानव को मानव से दूर हटाने वाली भयंकर भावनाओं का गला घोंट उन्हें ज्ञान और प्रेम के चमत्कारिक रसपान से सच्चे साथी बनने का प्रयास करते रहे। संसार के किसी भी वीर में इन दोनों भावों का मिलन इतने उच्च रूप में कम ही देखने को मिलता है।

अन्याय को चुपचाप सहन करना कायरता है। अन्याय का दमन करके हारे हुये सैनिकों से भी प्रेम व्यवहार तथा परस्पर फूट और विरोध उत्पन्न करने वाली भावनाओं का समूल नाश करके भक्ति, वीरता और त्याग के सुन्दर पुष्प खिला देने की शिक्षा हमें छत्रसाल के जीवन से लेनी चाहिए।

पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान केन्द्र
तिथी
पु०सं०
भारती पुस्तकालय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection:

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुलखनी देवी महाजन

एम०/१०, लाजपतनगर, नं०

सुलखनी देवी महाजन धर्मार्थ ट्र
१९६८ में डाक्टर विद्याधर महाजन
लाजपतनगर, नई दिल्लीने अपनी पूज्
में की और अपना निवास स्थान III-
नई दिल्ली ट्रस्ट को दान में दे दिया।
काम को सुचारु रूप से चलाने के लि
दिया। ट्रस्ट का उद्देश्य देश की हर [illegible] करना
है। उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ट्रस्ट ने निम्न-लिखित
पुस्तकें मुफ्त बांटने के लिए छापी हैं:—

१—संध्या तथा हवन मन्त्र।
२—वैदिक सन्ध्या।
३—देश-भक्ति के गीत।
४-ईश्वर-भक्ति के गीत।
५-मनुष्य स्वस्थ कैसे रह सकता है?
(आचार्य कविराज हरदयाल वैद्य वाचस्पति)
६-दैनिक रोगों की सरल चिकित्सा
(आचार्य कविराज हरदयाल वैद्य वाचस्पति)
७—आहार और स्वास्थ्य
(आचार्य कविराज हरदयाल वैद्य वाचस्पति)
८—दैनिक योग आसन (महाशय बिशनदास)
९—आदर्श जीवन कथाएं (विमला मेहता)
१०—दांतों की सुरक्षा (डा० एम०एल० वाट्स)
११—राजस्थान का गौरव (चन्द्रमोहन बुद्धिराज)
१२—प्रभु-भक्ति का मार्ग (ईश्वरदास चोपड़ा)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

सार्वदेशिक प्रेस, दरियागंज, नई दिल्ली-२